संताल हूल 1855-1856 की 170वी वर्षगांठ पर विशेष | **संताल हूल 1855-1856 के इतिहास का विऔपनिवेशीकरण**

संताल हूल से विकसित हुई देश में क्रांति हेतु प्रतिक चिन्हों की अवधारणाः डॉ. दिनेश नारायण वर्मा, इतिहासकार

(डा.दिनेश नारायण वर्मा जनजातीय इतिहास के वरीय विद्वान के रूप मे प्रख्यात है और विगत कई वर्षों से संताल हूल 1855-1856 पर शोध कार्य में संलग्न हैं। संताल हूल पर उनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं,कई शोध आलेख भी प्रकाशित हुए हैं।दिसम्बर 2024 बरेली,उत्तर प्रदेश और जून 2025 पटना, बिहार से प्रकाशित शोध जरनल्स में उनके संताल हूल विषयक शोध आलेख प्रकाशित हुए हैं। इतिहासकार वर्मा साम्राज्यवादी इतिहास लेखन के बड़े आलोचक रहे हैं और अनेक ऐतिहासिक प्रामाणिक देशज स्रोतों की विवेचना कर उन्होंने साम्राज्यवादी इतिहास लेखन का खंडन किया और स्पष्ट किया कि संताल हूल देश की पहली जनक्रांति और एशिया महादेश का पहला जन आन्दोलन था। अपने अद्यतन आलेख में इतिहासकार वर्मा ने संताल हूल के इतिहास का विऔपनिवेशीकरण करने का प्रयास कर इसे व्यापक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की कोशिश की है। यह आलेख पाठकों के लिए प्रस्तुत है-डा.सिकन्दर कुमार,संपादक)

झारखण्ड देखो डेस्क।

देश के मूल निवासी जनजातीय समुदाय के लोग अपने समाज और सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति ही सजग और समर्पित नहीं रहे हैं बल्कि अपनी आजादी को कायम रखने के लिए भी उन्होंने अपने परम्परागत हथियारो से लगातार संघर्ष किया और अपने क्षेत्रों में विदेशियों को घुसपैठ करने से रोका। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से जनजातीय प्रतिरोधों की एक लम्बी श्रृखंला है जिसकी शुरुआत पहाड़िया प्रतिरोध (1765-1782)से हुई जिन्होंने अपनी स्वतंत्रता हमेशा कायम रखी। इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्यवादी लेखकों ने जिन जनजातियों को जंगली, अशिक्षित और असभ्य बताकर उनकी भर्त्सना की थी उन्हीं जनजातियों ने देश में सर्वप्रथम जॉन कम्पनी शासन का प्रतिरोध शुरू किया। 1857 के राष्ट्रीय समर के पूर्व चुआड़,मुण्डा, चेरो,हो,भील,खोंड, भूमिज, अबोर,लुशाई,नागा आदि जनजातियों के अलावा संतालों ने 1855-1856 में कम्पनी शासन का जबरदस्त सशस्त्र प्रतिरोध किया और स्थानीय अन्य जनजातियों,दलितों और पिछड़े वर्गों को साथ लेकर देश में पहली बार अपना राज स्थापित करने की ऐतिहासिक कोशिश की। इससे देश के जनजातीय इतिहास में संताल हूल की एक अलग पहचान विकसित हुई । यह जनजातीय इतिहास सका एक स्वर्णिम अध्याय है।पर मान1867,हंटर 1868,बकलैंड 1901,ब्रोडले-बर्ट 1905,1910, मैकफर्सन 1909,औ मैली 1910,1910,1925 और कार्सटेयर्स 1912 आदि ब्रिटिश साम्राज्यवादी लेखकों ने संताल हूल को महज महाजनों और जमींदारों के खिलाफ बताकर इसकी ऐतिहासिक महता को कम करने की कोशिश की जिसकी शुरुआत गवर्नर जनरल लार्ड डलहौजी 1848-1856 ने की थी जब उन्होंने ने इसे कोई महत्व नहीं दिया था और संताल हूल को लोकल आउटब्रेक बताया था। चूंकि इन ब्रिटिश साम्राज्यवादी लेखकों की रचनाओं में वर्णित दृष्टिकोणों का बिगत वर्षों में मूल्यांकन नहीं किये जाने के फलस्वरूप शोध और शैक्षणिक जगत में संताल हूल की साम्राज्यवादी विवेचना कई अर्थों में प्रभावशाली रही और इसे महज महाजनों और जमींदारों के खिलाफ संघर्ष बताया गया। इसकी मूल वजह यह है कि अधिकांश रचनाएं औपनिवेशिक स्रोतों पर आधारित हैं और इन स्रोतों की भी समीक्षा नही की गई और नदिया के कमिश्नर ए.सी.बिडवेल की रिपोर्ट(10 दिसम्बर 1855) जैसे महत्वपूर्ण स्रोंतो की पूरी तरह से उपेक्षा कर दी गई। ज्ञातव्य है कि योग्य,कर्मठ और ईमानदार प्रशासक कमिश्नर ए.सी. बिडवेल को संताल हूल के दमन के लिए स्पेशल कमिश्नर नियुक्त किया गया था जिन्होनें अपनी रिपोर्ट में कम्पनी सरकार ,इसके अधिकारियों आदि की विफलता,उनकी गलत नीति आदि को ही स्पष्ट नहीं कर दिया था बल्कि महाजनों, जमींदारों, पुलिस,रेवेन्यू और कोर्ट के करमचारियों की मिलीभगत को भी उजागर कर दिया था। समकालीन लोकप्रिय समाचार पत्र हिन्दू पैट्रिओट ने उनकी नियुक्ति की

प्रशंसा की और जमीनी तथ्यों के उजागर होने की उम्मीद जतायी।उनकी रिपोर्ट कम्पनी सरकार पर जबरदस्त प्रहार था इसलिए किसी भी ब्रिटिश साम्राज्यवादी लेखक ने कमिश्नर ए.सी.बिडवेल की रिपोर्ट का उल्लेख अपनी विवेचना में नहीं किया और इसे महाजनो और जमींदारों के खिलाफ स्थानीय संघर्ष के रूप में वर्णित किया।उन्होंने समकालीन कलकत्ता से प्रकाशित द बंगाल हरकारू,द फ्रेंड आफ इंडिया,हिन्दू पैट्रिओट,संवाद प्रभाकर, संवाद भास्कर,समाचार सुधादर्शन आदि समाचार पत्रों में संताल हूल से सम्बन्धित लगातार प्रकाशित हुए ऐतिहासिक और प्रामाणिक देशज स्रोतों की उपेक्षा की। इन समाचार पत्रों में संताल हूल को जनक्रांति बताया गया और इससे जुड़ी घटनाओं को प्रमुखता से प्रकाशित किया गया। दूसरी ओर कलकत्ता रिव्यू 1856(26) और 1860(35) में साम्राज्यवादी नजरिये को प्रमुखता से उजागर किया गया। इस संदर्भ में विशेष रूप से यह उल्लेखनीय है कि बंगाल सरकार के सचिव को प्रेषित पत्र(दिनांक 28 जुलाई 1855) में भागलपुर के कमिश्नर ने ग्वालों,तेलियों,लोहारों आदि जातियों के हूल में सक्रिय रूप शामिल होने का उल्लेख किया और इन्हें कठोर रूप से दंडित करने की अनुशंसा की ।पर कलकत्ता रिव्यू (1856,26)ने लिखा कि कुछ बंगालियों, लोहारों,तेलियों,ग्वालों आदि को लालच देकर हूल में शामिल किया गया।इस प्रकार कलकत्ता रिव्यू (1856,26)ने संताल हूल को मिले जन समर्थन को विकृत करने की कोशिश की जिसमें हूल के दौरान गिरफ्तार और न्यायालय से दंडित किये गये समकालीन समाज के संतालों के अलावा पहाड़िया,कोल, नाई,डोम, धांगड़,ग्वाला,भुंइया, राजभर आदि जनजातियों,दलितों और पिछड़ों का उल्लेख है जो विभिन्न 52 गांवों के निवासी थे।जेल में बन्द कैदियों के खिलाफ भी गवाहों का मिलना काफी कठीन था जिसका उललेख कमिश्नर बिडवेल की रिपोर्ट में है। इससे संताल हूल को स्वतः स्फूर्त मिले जन समर्थन की पुष्टि होती है। दूसरी ओर डब्ल्यू. डब्ल्यू.हंटर नें संताल हूल को महाजनों और जमींदारों के खिलाफ बताया और संताल हूल के समय अंग्रेजों की मदद करने वालों को पैट्रिओटिक नेटिव कहा। ब्रोडले-बर्ट ने हंटर का समर्थन ही नहीं किया बल्कि संताल हूल को हिन्दुओं के खिलाफ भी बताया और हूल में साम्प्रदायिक तत्वों को जोड़ने की खतरनाक कोशिश की।उन्होंने अपनी एक अन्य प्रसिद्ध रचना (1910) में बर्दवान और मुर्शिदाबाद के नब्वाबों की जोरदार प्रशंसा की जिन्होने संताल हूल और 1857 के राष्ट्रीय समर में कम्पनी सराकार की मदद की थी। ऐसे ही नब्वाबों,महाराजाओं और जमींदारों ने 1857 के समर में अंग्रेजों की मदद कर राष्ट्रवादी भारतीयों की असफलता मे बड़ी भूमिका निभाई। 3 जनवरी 1856 को मार्शल कानून स्थगित कर दिया और संताल हूल के पूरी तरह से दमन कर दिये जाने की घोषणा कर दी गई। ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि विगत छह महीने से संघर्ष चल रहा था पूरी दुनिया में इस पर टीका-टिप्पणी हो रही थी और वैश्विक स्तर पर अंग्रेजों की प्रतिष्ठा प्रभावित हो रही थी। ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार संताल हूल के नायकों की गिरफ्तारी,उन्हें दंडित किये जाने और हूल के दमन किये जाने की सरकारी घोषणा के बावजूद संताल एकदम शांत नहीं हो गये,स्थानीय स्तर पर उनका प्रतिरोध जारी रहा और 1857 के राष्ट्रीय समर में भी उन्होंने विदेशी सत्ता का प्रतिरोध किया।इस सम्बन्ध में होम जूडिसीयल फाइल 1857(राष्ट्रीय अभिलेखागार) काफी महत्वपूर्ण हैं।जनसांख्यकीय स्वरूप ,रात्रिकालीन बैठकें,विभि- ऐतिहासिक उदघोषणाएं,स्थानीय स्तर पर संगठन,परम्परागत हथियारों से संघर्ष,संघर्ष में जहरीले तीरो की उपेक्षा,विदेशी शासन के खिलाफ साम्प्रदायिक एकता और जनजातियों,दलितों और पिछड़ों में गजब की एकता और ब्रादरहूड,अपना राज स्थापित करने की घोषणा,अलौकिक शक्तियों की भूमिका आदि ऐसे ऐतिहासिक और प्रमाणिक पहलू हैं जिससे प्माणित है कि संताल हूल 1857 के राष्ट्रीय समर के पूर्व स्वाधीनता के लिए भारत की पहली जनक्रांति और 19वीं शताब्दी में एशिया महादेश का सबसे बड़ा जन आन्दोलन था। मार्क्सवाद के जनक कार्ल मार्क्स ने अपने नोट्स आन इंडिया (664-1858)में संताल हूल का उल्लेख किया और स्पष्ट किया किया छह महीने की लगातार छापामार युद्ध के बाद ही इसका दमन किया जा सका। 30 जून 1855 को भगनाडीह में चार सौ गांवों के दस हजार संताल नहीं बल्कि स्टेफन फ्यूक्स और जोसेफ ट्रोइसी (2024) के अनुसार तीस हजार संताल एकत्रित हुए थे। चूंकि ये संताल चार सौ गांवों से आये थे इसलिए कथित अधुनिक लेखकों की विवेचना समीचीन जान पड़ती है। सभा में सिदो और कान्हू को अपना नायक घोषित करने के बाद संतालों ने क्रांति के प्रतिक के रूप में संताली गांवों में शाल की टहनी घुमायी गयी और सभी लोगों को हूल में शामिल होने का संदेश दिया गया। 1857 के राष्ट्रीय समर में भी प्रतिक चिन्ह कमल और चपाती का बड़ा योगदान था। इससे प्रमाणित है कि क्रांति-प्रतिक चिन्ह की अवधारणा संताल हूल से प्रस्फुटित हुई और यह क्रांतिकारियों को एकजुट और संगठित करने का महामंत्र बन गया। यह उल्लेख भी मिलता है कि हूल से पहले पर्ण प्याला में तेल और सिन्दूर एक गांव से दूसरे गांव में भेजा गया जिसका मकसद बोंगाओं को संतुष्ट करना और विदेशियों के खिलाफ हूल मे उनका सहयोग प्राप्त करना था। इससे स्पष्ट है कि इस तरह के सांस्कृतिक अनुष्ठानों के माध्यम से सभी संतालों को एकजुट और संघर्ष की शक्ति अर्जित करने की कोशिश की गई जो बड़ी कारगर सिद्ध हुई। सरकारी लेखक मैकफर्सन (1909) प्रख्यात विद्वान स्क्रेफस्त्रुड औरओलढ्म के व्यतव्यों से स्पष्ट है कि संताल अपने स्वर्ण युग की कल्पना से प्रेरित हो गये थे और संताल हूल द्वारा उन्होंने संताल किंगडम स्थापित करने की प्रयास किया। इस पृष्ठभूमि में नायकों को मिले दिव्य संदेश नें आग में घी का काम किया और कम्पनी शासन के एक बड़े भू-भाग पर हूल तेजी से प्रचारित-प्रसारित हो गया। साम्राज्यवादी लेखक औ मैली ने अपनी एक अन्य रचना (1925)में हूल को अंग्रेजों के नहीं बंगालियों के खिलाफ बताया और लिखा कि इसकी घोषणा स्वयं संतालों ने की थी ।पर कलकत्ता रिव्यू 1860 (वाल्यूम 35) से पता चलता है कि पोन्टेट और कई अन्य अंग्रेज अधिकारियों का सर काट कर लाने पर संतालों द्वारा इनाम देने की पेशकश की गई थी। इतना ही नहीं 7 जुलाई 1855 को दारोगा महेश लाल दत्त और उसके सिपहियों की हत्या के बाद हूल , हूल का उद्घोष किया गया और बड़े ही उत्तेजित वातावरण में घोषणा की गई -दारोगा नहीं,हाकिम नहीं,सरकार नहीं,अब हम संतालों का राज आ गया। इससे हूल का धरातलीय स्वरूप स्पष्ट है जिससे पता चलता है कि संतालों का एकमात्र मकसद विदेशी शासन से मुक्ति पाना था और अपना राज स्थापित करना था। इस प्रकार महात्मा गांधी से 87 वर्ष, एक महीना और दस दिन पहले संतालों ने अंग्रेजों भारत छोड़ने को कहा और जनजातियों दलितों और पिछड़े वर्गों को आपनी आजादी के लिए करो या मरो का महामंत्र दिया। अपने ऐतिहासिक मिशन को प्राप्त करने में असफल होने के बावजूद संताल हूल का संदेश पूरे भारत में ही नही विश्व में भी प्रचारित -प्रसारित हो गया।इससे प्रेरित होकर भारतीयों ने शोषण और दमन के खिलाफ संघर्ष जारी रखा।अन्ततः पूरे देश में ब्रिटिश साम्राज्यवाद का प्रतिरोध शुरू हो गया।

झारखंड

हिन्दी दैनिक
झारखण्ड देखो
खबरें, कहानी, लोग और बहुत कुछ

संताल हूल 1855-1856:आदिवासी प्रतिरोध और विरासत की स्मृति विषयक सेमिनार का भव्य आयोजन

- **हूल जनजातीय अस्मिता,आत्मगौरव और सांस्कृतिक मूल्यों हेतु संघर्ष का प्रतीक-डॉ. कुमार संजय झा**
- **हूल के नायक और नायिकाओं की प्रामाणिक भूमिका को रेखांकित किये जाने की आवशयकता-डॉ.विनोद कुमार**
- **हूल ने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वतंत्रता की चेतना को जागृत किया-डॉ.दिनेश नारायण वर्मा**
- **हूल से अदिवासी चेतना और प्रतिरोध की दिशा तय हुई-प्रो पीयुष कमल सिन्हा**

झारखंड देखो /प्रतिनिधि।

राँची(झारखंड):इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र,क्षेत्रीय केन्द्र,राँची एवं डॉ.शयाम प्रसाद मुखर्जी विवि.,राँची के जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग के संयुक्त तत्वावधान में ऐतिहासिक संताल हूल 1855-1856 की 170वीं वर्षगांठ मनायी गयी और मौके पर ₹संताल हूलःआदिवासी प्रतिरोध और विरासत की स्मृति₹ विषयक एक दिवसीय सेमिनार का भव्य आयोजन किया गया। सेमिनार में पश्चिम बंगाल,बिहार और झारखण्ड के प्रख्यात इतिहासकारों,विद्वान लेखकों,पत्रकारों,शोधार्थियों और छात्र-छात्राओं के सक्रिय योगदान द्वारा जनजातीय प्रतिरोध और विरासत की स्मृति को पुनर्जीवित किया गया।इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के क्षेत्रीय निदेशक डॉ कुमार संजय झा ने अतिथियों का अभिवादन करते हुए कार्यक्रम का स्वागत भाषण प्रस्तुत किया और संताल हूल के उपेक्षित समृद्ध इतिहास की व्यापक चर्चा की। उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों को रेखांकित करते हुए स्पष्ट किया कि हूल केवल विद्रोह ही नहीं बल्कि जनजातीय अस्मिता,आत्मगौरव और सांस्कृतिक मूल्यों हेतु संघर्ष का प्रतीक भी था। उन्होंने आज के सेमिनार के शोधार्थियों और छात्र-छात्राओं के अलावा आम लोगों के लिए भी महत्वपूर्ण होने की उम्मीद जतायी और कहा कि इसके माध्यम से हूल के गुमनाम नायकों और उनकी संघर्ष गाथा को उजागर किया जा सकेगा जिनका उल्लेख इतिहास की पुस्तकों में नहीं है। उनके अनुसार सेमिनार हूल की एतिहासिक,सांस्कृतिक,राजनीतिक और सामाजिक विरासत को उजागर करने में एक सार्थक पहल है ।इससे इतिहास लेखन में उपेक्षित जनजातीय प्रतिरोधों के प्रति एक नई दृष्टि और गम्भीर विमर्श की उम्मीद है। जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग,डॉ. शयाम प्रसाद मुखर्जी विवि. के समन्वयक डॉ. विनोद कुमार ने 'हूल' शब्द की विविध व्याख्या प्रस्तुत की और स्पष्ट किया कि अधिकांश इतिहासकारों द्वारा 1857 के राष्ट्रीय सम्राम को देश का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम कहा गया पर ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देश में स्वतंत्रता की लौ संताल हूल के द्वारा प्रज्जवलित की गई। डॉ कुमार ने भोगनाडीह के संताल हूल के सिदो,कान्हू,चांद,भैरो,फूलो और झानो आदि वीरों और वीरांगनाओं के शौर्य और बहादुरी को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हुए कहा कि इन नायक और नायिकाओं की हूल में प्रामाणिक भूमिका को इतिहास के पृष्ठों में दर्ज किये जाने की अवशयकता है।

मगध विवि.,बोध गया,बिहार के प्रोफेसर पीयुष कमल सिन्हा ने संताल हुल पर अपना वक्तव्य देते हुए कहा कि हूल प्रत्यक्ष रूप से भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ा हुआ नहीं था पर औपनिवेशिक शोषण के विरूद्ध यह पहला संगठित जन प्रतिरोध था।इससे अदिवासी चेतना और प्रतिरोध की दिशा तय हुई। उन्होने स्पष्ट किया कि इतिहास को किसी विशेष विचारधारा से देखे जाने के फलस्वरूप आदिवासी समाज की विविधता,उनकी पहचान और संघर्ष के ऐतिहासिक पहलुओं की अनदेखी हो जाती है। प्रोफेसर सिन्हा ने लोक कथाओं की ऐतिहासिक महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा कि हूल के नायकों को दिव्य प्रेरणा प्राप्त हुई जिन्होने हूल का नेतृत्व किया। उनके अनुसार यह ऐतिहासिक घटनाओं और आदिवासी समाज के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विश्वासो को स्पष्ट करता है।स्टडी एडं रिसर्च सेंटर,रामपुरहाट,पश्चिम बंगाल के निदेशक डॉ.दिनेश नरायण वर्मा ने कहा कि देश के मूल निवासी जनजातीय समुदाय के लोग अपने समाज और सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति ही सजग और समर्पित नहीं रहे हैं बल्कि अपनी आजादी को कायम रखने के लिए उन्होंने अपने परम्परागत हथियारो से लगातार संघर्ष भी किया। जनजातीय प्रतिरोधों की लम्बी श्रृखंला की विवेचना करते हुए प्रोफसर वर्मा ने संताल हूल को भारतीय इतिहास का एक निर्णायक मोड़ बताया और कहा कि इसने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वतंत्रता की चेतना को जागृत किया।इतिहासकार वर्मा ने औपनिवेशिक इतिहास लेखन (1868-1925)की कड़ी आलोचना करते हुए कहा कि जनजातीय अस्मिता और अधिकारों की रक्षा के लिए संताल हूल एक स्वतःस्फूर्त जनक्रांति थी जिसके संदेशों से पूरा देश प्रभावित हुआ और विदेशों में भी इस पर टीका -टिप्पणी की गई। जनजातियों को अशिक्षित ,जंगली,असभ्य,बर्बर कहने वाले विदेशी शासकों से जनजातियों ने महीनों संघर्ष किया और कभी हथियार नहीं डाले।विभिन्न ऐतिहासिक तथ्यों की व्यापक विवेचना करते हुए उन्होंने संताल हूल को देश की पहली जनक्रांति और एशिया महादेश का सबसे बड़ा जन आन्दोलन बताया। उन्होने हूल के पहले संताल समाज में इसके नायकों द्वारा तेल और सिंदूर वितरित करने,अपने बोंगा देवताओं को संतुष्ट कर उनका सहयोग प्राप्त करने और शाल टहनी का संतालों के गांवों में वितरित कर अपने संगठन को मजबूत करने के उनके सांस्कृतिक अनुष्ठान सम्बन्धी प्रयासों को रेखांकित किया। इतिहासकार वर्मा ने भारतीय इतिहास को उपनिवेशवादी नजरिये से मुक्त कर जनजातीय संघर्षों को उनके यथार्थ रूप मे प्रस्तुत किये जाने की आवशयकता बतायी और इस हेतु महज औपनिवेशिक स्रोतों को ही नहीं बल्कि देशज स्रोतों के अध्ययन और मूल्यांकन भी पर जोर दिया। मौक पर डा. वर्मा ने संताल हूल पर लिखित अपनी दो रचनाएं निदेशक डॉ.कुमार संजय झा को भेंट में दीं।मौके पर डा.आर. के.नीरद, संजय कृष्ण,सौभिक सरकार(जेआरएफ,रिसर्च स्कॉलर,तिलका मांझी ,भागलपुर विवि.,भागलपुर,बिहार) सेवानिवृत प्रोफेसर डॉ. कमल कुमार बोस (हिन्दी विभाग,सेंट जेवियर्स कालेज,राँची) आदि ने भी सेमिनार में अपने विचार रखे। प्रख्यात पत्रकार और लेखक डा. नीरद ने वैज्ञानिक उपायों की उपलब्धता(डिजिटल संसाधन आदि) के आलोक में कहा कि उपलब्ध स्रोतों और तथ्यों में तथ्यात्मक शुद्धता और प्रामाणिकात का अभाव चिन्ताजनक है। उन्होंन शोधार्थियों को सम्बोधित करत हुए कहा कि इतिहास मात्र अतीत का ही लोखा जोखा नहीं है बल्कि एक उंत्तरदायित्व भी है जिसे गहन अधययन,समर्पण और आलोचनात्मक नजरिये के साथ समझने की जरूरत है। डा.नीरद ने कहा कि हमें इतिहास के प्रति उदासीन और लापरवाह नहीं होना चाहिए। वरिषठ पत्रकार संजय कृष्ण ने संताल हूल की पृष्ठभूमि रेखांकित करते हुए वर्ष 1855 में इसके उग्र और व्यापक रूप में उभर कर सामने आने का उल्लेख किया। श्री कृष्ण के अनुसार इसकी पुष्टि अंग्रेज अधिकारियों द्वारा लिखित रिपोर्टों,दस्तावेजों,पत्रिकाओं,तत्कालीन समाचार पत्रों आदि से होती है। उन्होंने हूल के गुमनाम नायकों की खोज की आवशयकता बतायी और कहा कि ऐसे कई नायक हैं जिनका हूल में महत्वपूर्ण भूमिका थी।उनके अनुसार हूल के ऐसे नायकों को खोजने की आवशयकता है। सेवानिवृत प्रोफेसर डॉ. कमल कुमार बोस ने संताल हूल के नायकों और वीरांगनाओं की वीरता और भावना को क्यात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से प्रस्त्तुत किया जिससे सेमिनार मे उपस्थित सभी लोग प्रभावित हुए। पीएच. डी. स्कॉलर सौभिक सरकार नें संताल समाज में कर्ज और हूल की उत्पत्ति इसके योगदान के अलावा आधुनिक संदर्भों को भी रेखांकित किया। शोधार्थी सरकार का कहना था कि आज भी संताल समाज कर्ज के जंजाल से मुक्त नहीं है और इससे उन्हें निजात दिलाने के लिए पहल किये जाने की अवशयकता है। सेमिनार के विशिष्ट अतिथि डॉ.शयाम प्रसाद मुखर्जी विवि. के पूर्व कुलपति प्रो.डा. सत्य नारायण मुण्डा ने अपने सम्बोधन में कहा कि संताल हूल एक सशस्त्र संघर्ष ही नहीं था बल्कि यह जनजातीय समुदायों की सांस्कृतिक और आर्थिक अस्मिता को बचाए रखने हेतु एक प्रेरणादायक उदाहरण भी है। उन्होने कहा कि आज के आज के समय में हूल से जुड़ी चेतना को आत्मसात करने की आवशयकता है।उनके अनुसार हूल के दैरान आदिवासी समाज ने अपने जीवन,संस्कृति औक संसाधनों आदि की रक्षा के लिए संघर्ष किया था आज भी वैसी ही सजगता की आवशयकता है। सेमिनार का संचालन प्रो.बोस ने किया जबकि डॉ. जयकिशोर मंगल ,सहायक प्रोफेसर,हो विभाग,जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग,डॉ.शयाम प्रसाद मुखर्जी विवि. ने धन्यवाद ज्ञापन प्रस्तुत किया।

डीएसपीएमयू में हूल दिवस पर संगोष्ठी

हूल विद्रोह अपनी जड़ों से जुड़ने का साधन : डॉ मुंडा

डीएसपीएमयू में मंगलवार को संथाल हूल क्रांति पर संगोष्ठी में शामिल अतिथि।

रांची, विशेष संवाददाता। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, क्षेत्रीय केंद्र, रांची और डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी विवि (डीएसपीएमयू) के जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग की ओर से संताल हूल क्रांति (1855–56) की 170वीं वर्षगांठ पर मंगलवार को संगोष्ठी आयोजित की गई। विषय था- संथाल हूलः आदिवासी प्रतिरोध और विरासत की स्मृति। इसमें विद्वानों, शोधार्थियों और विद्यार्थियों ने हिस्सा लिया।

संगोष्ठी में विशिष्ट अतिथि डीएसपीएमयू के पूर्व कुलपति प्रो एसएन मुंडा ने कहा कि संथाल हूल विद्रोह महज एक सशस्त्र संघर्ष नहीं था, बल्कि यह जनजातीय समुदायों की सांस्कृतिक और आर्थिक अस्मिता को बचाए रखने का एक प्रेरणादायक उदाहरण है। उन्होंने कहा कि आज हूल विद्रोह से जुड़ी चेतना को आत्मसात करने की आवश्यकता है।

हूल विद्रोह हमें अपनी जड़ों से जुड़ने की प्रेरणा देता है इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, रांची के निदेशक डॉ कुमार संजय झा ने कहा कि हूल सिर्फ एक विद्रोह नहीं था, बल्कि आदिवासी अस्मिता, आत्मसम्मान और सांस्कृतिक संघर्ष का प्रतीक था। डीएसपीएमयू के जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग के समन्वयक डॉ बिनोद कुमार, ने कहा कि अधिकांश इतिहासकार 1857 को भारत के स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत मानते हैं।

आदिवासी चेतना और सांस्कृतिक अस्मिता को किया गया याद

डीएसपीएमयू में संगोष्ठी का उदघाटन करते अतिथि.

संथाल हूल की 170वीं वर्षगांठ पर संगोष्ठी

रांची. ऐतिहासिक संथाल हूल (1855-56) की 170वीं वर्षगांठ पर मंगलवार को डीएसपीएमयू में संगोष्ठी हुई. विषय था संथाल हूल, आदिवासी प्रतिरोध और विरासत की स्मृति. कार्यक्रम का आयोजन इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, क्षेत्रीय केंद्र रांची और डीएसपीएमयू के जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग के संयुक्त तत्वावधान में किया गया. पूर्व कुलपति डॉ एसएन मुंडा ने कहा कि संथाल हूल केवल एक सशस्त्र विद्रोह नहीं था, बल्कि यह आदिवासी समुदायों की सांस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक अस्मिता को बचाने का एक साहसिक प्रयास था. आज आवश्यकता है कि हम हूल चेतना को आत्मसात करें और अपनी जड़ों से जुड़ें. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के क्षेत्रीय निदेशक डॉ कुमार संजय झा ने कहा कि हूल विद्रोह भारतीय इतिहास का वह अध्याय है, जो अक्सर उपेक्षित रह गया है. "यह सिर्फ विद्रोह नहीं, बल्कि आत्मसम्मान, अस्मिता और सांस्कृतिक संघर्ष की जीवंत मिसाल है. डॉ विनोद कुमार ने 'हूल' शब्द की विभिन्न व्याख्याओं पर प्रकाश डाला. वरिष्ठ पत्रकार डॉ आरके नीरद ने संबोधित किया.